arunjaity1:arunjaity.qxd 9/26/2010 9:05 PM Page 152

# संघ का आदमी

## मुश्किल है नानाजी को सांचे में ढालना

**नानाजी को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का एक वरिष्ठ नेता बताया गया है, लेकिन उस व्यक्ति को किसी एक ढांचे में फिट करना कठिन है, जिसने रचनात्मक सामाजिक सक्रियता का अपना पथ खुद तैयार किया था।**

सुधींद्र कुलकर्णी

अगर सफेद रंग त्याग का होता है, तो यह नानाजी देशमुख पर पूरी तरह जंचता था। आधुनिक युग के इस महान सन्यासी का, जिनका 27 फरवरी को 94 वर्ष की उम्र में चित्रकूट में स्वर्गवास हो गया, यह पसंदीदा रंग था। सफेद बेदाग धोती कुर्ते में, सफेद झूलती दाढ़ी, वह पूरी तरह वैसे ही योगी लगते थे, जैसे योगी वह थे।

हालांकि मीडिया ने नानाजी को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का एक वरिष्ठ नेता बताया है, लेकिन वास्तव में उस व्यक्ति को किसी एक ढांचे में फिट कर सकना कठिन है, जिसने 1977 के बाद रचनात्मक सामाजिक सक्रियता का अपना भिन्न पथ खुद तैयार किया था। कोई संदेह नहीं कि वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार के बिल्कुल शुरूआती अनुयायियों में से एक थे और उन्होंने प्रचारक के रूप में उत्तर भारत में संगठन के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान दिया था। लेकिन पंडित दीनदयाल उपाध्याय के नेतृत्व में जनसंघ के संगठनकर्ता के रूप में उन्होंने कहीं बड़ी छाप छोड़ी थी। 1968 के आरंभ में उपाध्याय की असामयिक मृत्यु के बाद पार्टी को कठिन दौर से बाहर निकालने में उन्होंने अटलबिहारी वायपेयी और लालकृष्ण आडवाणी की मदद की थी।

1970 के दशक की शुरूआत में, जब जयप्रकाश नारायण इंदिरा गांधी के तानाशाह शासन के खिलाफ गैरकांग्रेसी विपक्ष के नेता के तौर पर उभरे, तो संपूर्ण क्रांति का संदेश आगे ले जाने के लिए उन्हें नानाजी के रूप में एक योग्य सेनापति मिला। जाने-माने समाजवादी जेपी को नानाजी जनसंघ के नजदीक ले आए, यहां तक वह उन्हें मार्च 1975 में जनसंघ के पूर्ण अधिवेशन में भी एक विशेष अतिथि के तौर पर आने के लिए राजी करने में सफल रहे। जब कुछ लोगों ने एक फासिस्ट पार्टी के ज्यादा ही नजदीक चले जाने के लिए जेपी की आलोचना की, तो जेपी ने जनसंघ के ही मंच से यह प्रसिद्ध घोषणा की, 'अगर जनसंघ फासिस्ट है, तो जयप्रकाश नारायण भी फासिस्ट है.' और उन्होंने भविष्यवाणी करने के अंदाज में कहा था, 'फासिज्म का सूरज कहीं और उग रहा है।' इसके तीन महीने बाद ही आपातकाल लागू कर दिया गया था।

नानाजी आपातकाल के खिलाफ चले भूमिगत संघर्ष के नायकों में से एक थे। लेकिन जब 1977 में जब आपातकाल हटा और जनता पार्टी भारी बहुमत से चुनाव जीती, तो उन्होंने मंत्रिमंडल में शामिल होने का प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई का प्रस्ताव ठुकरा दिया था। उन्हें इस बात का अफसोस था कि सत्ताकेन्द्रित राजनीति समाज में विभाजन पैदा कर रही है। लिहाजा उन्होंने इसे त्याग दिया, ग्रामीण विकास के अपने स्वप्न को क्रियान्वित करने के लिए चित्रकूट चले गए और फिर कभी पलट कर नहीं देखा। दो जिलों - एक उत्तरप्रदेश का और एक मध्यप्रदेश का- में सूक्ष्म स्तर पर उन्होंने जो काम खड़ा किया, बहुत प्रभावशाली था और उसे रतन टाटा से लेकर एपीजे अब्दुल कलाम तक चित्रकूट जाने वाले हर व्यक्ति की प्रशंसा मिली। उन्होंने भारत का पहला ग्रामीण विश्वविद्यालय स्थापित किया। उन्होंने जो कृषि विज्ञान केन्द्र स्थापित किए, वह देश में सर्वश्रेष्ठ में से एक हैं।

एक किसान ने कहा- हमारे गांव से पिछले छह वर्ष से कोई भी व्यक्ति गांव छोड़ कर शहर नहीं गया है। यह वह सबसे अच्छी श्रद्धांजलि है, जो इस अद्भुत सामाजिक कार्यकर्ता को दी जा सकती है, जो आंशिक तौर पर संघ का स्वयंसेवक था, थोड़ा गांधीवादी था और थोड़ा समाजवादी। ■

**लेखक परिचय**

*जाने-माने पत्रकार व स्तंभकार **सुधींद्र कुलकर्णी** को नानाजी के साथ काम करने का अवसर मिला तो प्रधानमंत्री रहते हुए अटल जी ने भी उनके अनुभव का लाभ प्रधानमंत्री कार्यालय में भी उठाया।*

# नाना प्रकार के नानाजी

## पहल और प्रयोग के पक्षधर

**कुछ हट के सोचना और नया कर दिखाना नानाजी की विशेषता थी। वे कल्पना दारिद्रय के शिकार नहीं थे। अभाव और असुविधाएं उन्हें कभी नहीं रोक पाईं।**

के.एन. गोविन्दाचार्य

नानाजी से मेरी पहली मुलाकात 1962 में वाराणसी में एक प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान हुई। वहां अपने उद्‌बोधन में उन्होंने दीनदयालजी की विचारधारा के बारे में सबको बहुत अच्छे से समझाया। वहीं से मेरे और नानाजी के बीच एक संबंध की शुरुआत हुई। निर्लिप्त भाव से पर पूरी लगन के साथ काम करना नानाजी की विशेषता थी। काम में पूरी तरह रमे होने के बावजूद वे व्यक्ति, मुद्दे और आंदोलन के प्रति वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण रखते थे।

नानाजी ने काफी लंबे समय तक जनसंघ के संगठन मंत्री का दायित्व निभाने के साथ-साथ उसके लिए पैसा भी जुटाया। गुरुली वाडिया, मफतलाल और कई अन्य औद्योगिक घरानों के साथ उनके बहुत नजदीकी संबंध थे। वहां उनका सम्मान घर के एक बुजुर्ग की तरह होता था। इस सबके बावजूद उन्होंने उद्योगपतियों को पार्टी की प्राथमिक सदस्यता देने के लिए भी कभी कोई पहल नहीं की। साधन शुचिता उनके लिए सर्वोपरि थी। उनका मानना था कि उद्योगपतियों को पार्टी की नीतियों को प्रभावित करने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। एक बार विड़ला घराने के लोग किसी खास उम्मीदवार को आर्थिक मदद देना चाहते थे, लेकिन नानाजी ने मना कर दिया। उनका मानना था कि चंदा पार्टी के नाम पर आना चाहिए न कि किसी व्यक्ति के नाम पर। बेशक नानाजी का संबंध बड़े-बड़े उद्योगपतियों से था, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि वे आम आदमी से दूर थे। जितने आराम से वे रामनाथ गोयनका के पेटहाउस में रहते थे, उतने ही आराम से वे विहार के किसी गांव में खलिहान में पड़ी खाट पर सो लेते थे।

1969 में पटना में जब जनसंघ का अखिल भारतीय सम्मेलन हुआ तो मुझे नानाजी के साथ काम करने का फिर मौका मिला। रहन-सहन और कार्यपद्धति से जुड़ी कुछ आदतों के बारे में नानाजी की एक अलग सोच थी। वे चाहते थे कि सभी कार्यकर्ता उन पर अमल करें। उदाहरण के लिए वे कहते थे कि सादे जीवन का मतलब व्यक्तिगत स्वच्छता का अभाव नहीं होता। वे साधारण लेकिन धुले और इस्त्री किए हुए कपड़े ही पहनते थे। वे अपने जूतों की रोज पालिश करना नहीं भूलते थे। हमेशा खुश रहना नानाजी की सबसे बड़ी खूबी थी। वे प्रायः मुझसे कहते थे, 'यदि तुम बहुत अधिक व्यस्त हो, तब भी उसे जाहिर मत होने दो। खुश रहो और स्वस्थ रहो। एक बीमार आदमी सहानुभूति अर्जित कर सकता है, किसी को प्रेरित नहीं कर सकता।' कुछ हट के सोचना और नया कर दिखाना नानाजी की विशेषता थी। वे कल्पना दारिद्रय के शिकार नहीं थे। अभाव और असुविधा की सीमाएं उन्हें कभी नहीं रोक पाईं। वो नित नए प्रयोगों के पक्षधर थे। उत्तर प्रदेश में पहली बार उन्होंने शिशु मंदिर के नाम से शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ा प्रयोग किया। काम के दौरान आने वाले विरोधाभासों को उजागर करने की बजाय उनका जोर सामंजस्य विठाने पर होता था। गांधी जी की हत्या के पहले जब संघ पर प्रतिबंध नहीं लगा था, तब उन्होंने पहली बार एक गाड़ी (जीप) खरीदी। व्यापक जनसंपर्क के लिए उपयोगी उपकरणों का इस्तेमाल करने और मीडिया प्रबंधन की वकालत करने वाले वे संघ में पहले व्यक्ति थे।

आपातकाल लागू होने के ठीक पहले 1974 का वह दौर मुझे याद है, जब संघ परिवार में इंदिरा विरोधी आंदोलन में शामिल होने को लेकर असमंजस की स्थिति थी। ऐसे में नानाजी ने अपनी ओर से पहल की और वे जेपी आंदोलन में कूद पड़े। 4 नवंबर, 1974 के दिन जब पटना सचिवालय का घेराव किया जा रहा था, तब जेपी को पुलिस की लाठियों से बचाने का काम नानाजी ने ही किया था। जेपी को निशाना बनाकर बरसाई जा रही लाठियों को उन्होंने ढाल बनकर अपने ऊपर झेल लिया। जेपी के लिए उन्होंने अपने प्राण संकट में डाल दिए थे। 1977 में जनता दल सरकार में उनका उद्योग मंत्री बनना तय हो चुका था। लेकिन रज्जू भैया को कुछ ठीक नहीं लग रहा था। जिस दिन नानाजी को मंत्री पद की शपथ दिलायी जानी थी, उसी दिन रज्जू भैया ने उनसे कहा, 'आप पार्टी के लिए पैसा जुटाते रहें हैं। उद्योगपतियों से आपके नजदीकी संबंध हैं। उद्योगमंत्री का दायित्व निभाते हुए आप पर पक्षपात का आरोप लगेगा।' रज्जू भैया का इतना कहना नानाजी के लिए पर्याप्त था। उन्होंने तुरंत मंत्री पद ठुकरा दिया।

आगे चलकर नानाजी को यह विश्वास होने लगा था कि सार्थक बदलाव लाने के लिए राजनीतिक ताकत हासिल करना एक मात्र उपाय नहीं है। वे प्रायः कहा करते थे कि सामाजिक बदलाव के लिए दृष्टिकोण में बदलाव लाना पड़ेगा और उसके लिए हमें लोगों के बीच काम करना पड़ेगा, केवल राजनीतिक ताकत हासिल कर लेने से बात नहीं बनेगी। इसके कारण 1980 में भारतीय जनता पार्टी के गठन में उन्होंने कोई रूचि नहीं ली। जिस जल्दबाजी में केंद्र में भाजपानीत राजग सरकार बनी, नानाजी उसके भी आलोचक थे। राजनीतिक आपाधापी से दूर अपनी आखिरी सांस तक वे ग्रामीण विकास, स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में काम करते रहें। नानाजी के नहीं रहने से हमने एक ऐसे व्यक्ति को खो दिया जिसके लिए सामाजिक बदलाव कोई राजनीतिक नारा नहीं, बल्कि नैतिक प्रतिबद्धता की बात थी। ■

**लेखक परिचय**

*__गोविंदजी__ के नाम से पहचान रखने वाले, लेखक देश के प्रख्यात चिंतक व विचारक हैं। उन्होंने नानाजी को बहुत नज़दीक से देखा व समझा और अब देशभर में उन्हीं को जीने के प्रयास में लगे हुए हैं।*